Dec. 2020, Vol. 34
ISSN 0975-7872

हिन्दुस्तानी संगीत में संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत एवं महत्व

अंजली अग्रवाल
एम.फिल. शोधार्थी
संगीत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सार

हिन्दुस्तानी संगीत में रागों के कुछ निश्चित सिद्धांत होते हैं। कलाकार द्वारा राग–प्रस्तुतीकरण में राग के विभिन्न सिद्धांतों का अनुसरण किया जाता हैं। जिनमें से "रागों का समय सिद्धांत" अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इसमें प्रत्येक राग को गाने–बजाने का एक निर्धारित समय होता है। रागों का समय सिद्धांत हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की एक निजी विशेषता हैं। भारतीय शास्त्रकारों एवं संगीतकारों ने अपने अनुभव और मनोविज्ञान के आधार पर समय निर्धारण को स्वीकार किया और इसे मान्यता दी। उन्होंने निश्चित राग को निर्धारित समय पर गाये–बजाये जाने का विधान बनाकर उसे प्रचलित किया। मानव हृदय रागों को समयानुसार सुनकर आत्मिक आनंद का अनुभव करता है।

रागों के समय सिद्धांत में संधिप्रकाश रागों का महत्वपूर्ण स्थान हैं। 'संधिप्रकाश' उस समय को कहा जाता है जब प्रकाश एवं अंधकार का मिलन होता है। संधिप्रकाश, एक विशेष काल माना गया है। इसी समय सभी सर्वसाधारण कलाकार एवं जोगी अपनी साधना के लिये प्रेरित होते हैं तथा अपने–अपने कार्यों की सिद्धि के लिये ध्यान केन्द्रित करना प्रारंभ करते हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में, प्रातःकालीन एवं सायंकालीन संधिप्रकाश रागों के सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है। उदाहरण के लिये–प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग अधिकतर भैरव थाट के राग हैं परंतु मारवा एवं पूर्वी थाट के भी कुछ रागों को प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों की श्रेणी में रखा गया है जबकि पूर्वी एवं मारवा थाट के राग सायंकालीन संधिप्रकाश राग कहलाते हैं। इसके क्या कारण हैं? इसके अतिरिक्त संधिप्रकाश रागों में मध्यम स्वर की महत्ता बताते हुये उसमें रस, सौन्दर्य एवं महत्व इत्यादि विषयों पर चर्चा की गई हैं।

संकेत शब्द

समय सिद्धांत, संधिप्रकाश, प्रातःकालीन, सायंकालीन, सौन्दर्य

रागों का समय सिद्धांत

हिन्दुस्तानी संगीत में प्रत्येक राग को गाने का एक निश्चित समय निर्धारित होता है। प्राचीन काल से आधुनिक काल तक सभी ग्रंथकारों एवं शास्त्रकारों ने राग के महत्व का प्रतिपादन करते हुए राग

से संबंधित अनेक रीतियों एवं सिद्धांतों को प्रस्तुत किया है। भारतीय संगीत के विद्वानों के अनुसार रागों को यदि उनके निर्धारित समय पर गाया–बजाया जाये तो वह अत्यधिक शोभनीय होता है। इससे यह विदित होता है कि भारतीय संस्कृति में रागों का गायन–वादन करते हुये समय निर्धारण की जो परम्परा रही है, वह राग के सौन्दर्यात्मक पक्ष को प्रदर्शित करती है। रागों के समय निर्धारित करने के नियमों पर आधारित इसी सिद्धांत को 'समय सिद्धांत' कहा गया है।

नारद द्वारा रचित संगीत मकरंद में इसका वर्णन मिलता है। नारद ने तीन वर्गों में रागों को समयानुसार विभाजित किया। (1) सूर्यांश (2) मध्यांह्न (3) चंद्रांश। सूर्यांश राग प्रातःकालीन, मध्यांह्न राग दिन के समय तथा चंद्राश राग सायंकालीन राग कहलाते हैं। यह परम्परा धीरे–धीरे बढ़ती गई और आगे इसमें कुछ परिवर्तन हुये। अब यही परम्परा उत्तरांगवादी राग व पूर्वांगवादी राग के रूप में देखने को मिलती हैं। मध्याह्न के 12 बजे से मध्यरात्रि 12 बजे तक के राग पूर्व राग तथा मध्यरात्रि के 12 बजे से मध्याह्न के 12 बजे तक के राग उत्तर राग कहलाते हैं। राग एवं रस सिद्धांत के अतिरिक्त हिन्दुस्तानी संगीत में 'समय सिद्धांत' का अत्यधिक महत्व है। रागों की संख्या सीमित एवं पाठ्यक्रम की सुविधा की दृष्टि से रागों को उनके समय पर गाया–बजाया जाना उचित समझा जाता है।

आधुनिक काल में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत का जो रूप प्रस्तुत है, वह पं॰ विष्णु नारायण भातखंडे, पं॰ विष्णु दिगम्बर पलुस्कर, पं॰ ओंकारनाथ ठाकुर एवं पं॰ रातंजनकर इत्यादि विद्वानों के योगदान का परिणाम है जिन्होंने हिन्दुस्तानी संगीत में रागदारी प्रणाली को स्थिर रूप प्रदान करने में विशेष योगदान दिया। विशेष रूप से पं॰ भातखंडे द्वारा किये गये रागों का समय–सिद्धांत के महत्व को स्पष्ट करते हुये रागों के समय से संबंधित प्राचीन, मध्यकाल तथा आधुनिक कालीन क्रियात्मक संगीत के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। पं॰ भातखंडे जी ने रागों के समय पर चर्चा करते हुये गायकों, वादकों एवं श्रोताओं को इसका महत्व बताया।

क्रमिक पुस्तक मालिका के 5वें भाग में पं॰ भातखंडे जी ने राग निर्माण के नियमों की व्याख्या की है जिनमें से कुछ सिद्धांत संधिप्रकाश रागों से संबंधित हैं। जो इस प्रकार हैं–

1. "(अनु. 7) हिन्दुस्तानी पद्धति के सभी रागों के, उनके स्वरों के अनुसार, तीन वर्ग होते हैं–

(i) कोमल रे–ध वाले संधिप्रकाश राग

(ii) तीव्र (शुद्ध) रे, ग और ध वाले राग

(iii) कोमल ग, नि वाले राग। रागों के गायन समय से इस वर्गीकरण का निकट संबंध हैं।

2. (अनु. 8) संधिप्रकाश रागों को सूर्योदय और सूर्यास्त के समय गाने का नियम है, अतः ये संधिप्रकाश राग कहलाते हैं। इन्हें गाने के बाद शुद्ध रे, ग, ध वाले राग गाये जाते हैं। संधिप्रकाश काल प्रतिदिन दो बार आता है। अतः यह क्रम दिन व रात्रि में एक सा चलता है।

3. (अनु. 9) हिन्दुस्तानी संगीत में मध्यम स्वर बहुत ही वैचित्र्य माना जाता हैं। इसकी सहायता से राग का गायन–समय निश्चित किया जाता है, परन्तु इसके द्वारा राग की प्रकृति तक बदली जा सकती है। गुण के कारण इसे कहीं–कहीं 'अध्वदर्शक' कहा गया है।

4. (अनु. 10) हिन्दुस्तानी संगीत में तीव्र म के प्रयोग वाले राग अधिकतर रात्रि में ही गाये जाते हैं। इस स्वर से संयुक्त राग दिन में बहुत ही कम सुनाई देते हैं।

5. (अनु. 19) संधिप्रकाश रागों द्वारा करूण एवं शांत रस तथा इनके अंतर्गत रसों का पोषण होता है। शुद्ध रे, ग और ध वाले राग श्रृंगार, हास्य और इनके अंतर्गत रसों के पोषक और कोमल ग और नि वाले राग वीर, रौद्र तथा भयानक रसों के पोषक होते हैं।"

पं॰ भातखंडे द्वारा स्वर तथा समय की दृष्टि से भी रागों को तीन भागों में विभाजित कर उन्हें दिन व रात्रि के विभिन्न प्रहरों में गाने का निर्देश दिया, जो इस प्रकार हैं–

1) **कोमल रे – ध स्वर युक्त राग**, इन रागों का गायन–वादन प्रातःकाल 4 बजे से 7 बजे के बीच में किया जाता है। यह संधिप्रकाश राग कहलाते हैं।

2) **शुद्ध रे, ग तथा ध स्वर युक्त राग**, इन रागों को दिन व रात्रि के प्रथम प्रहर 7 से 10 बजे तक गाने–बजाने का निर्देश है।

3) **कोमल ग तथा कोमल नि स्वर युक्त राग**, इन रागों का गायन समय दिन व रात्रि के द्वितीय तथा तृतीय प्रहर, अर्थात् 10 से 1 बजे तक तथा 1 बजे से 4 बजे तक निर्धारित किया गया है।

संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत

संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत को दो वर्गो में वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत
2. सायंकालीन संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत

प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत – प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग भैरव थाट के रागों के अंतर्गत आते हैं। भैरव थाट में कोमल ऋषभ तथा कोमल धैवत स्वरों का प्रयोग किया जाता है। पं॰ भातखंडे जी के अनुसार–

"(अनु. 7) हिन्दुस्तानी पद्धति के सभी रागों के, उनके स्वरों के अनुसार, तीन वर्ग होते हैं–(1) कोमल रे – ध वाले संधिप्रकाश राग (2) तीव्र (शुद्ध) रे, ग और ध वाले राग (3) कोमल ग, नि वाले राग। रागों के गायन समय से इस वर्गीकरण का निकट संबंध हैं।"[1]

"(अनु. 24) प्रातःकालीन रागों में कोमल रे और ध की प्रबलता दिखाई पड़ती हैं।"[2]

हम सभी भैरव राग से भलि–भाँति परिचित हैं। यह एक सामान्य, सुंदर तथा लोकप्रिय राग है। इसका सार्वभौमिक रूप से समय भोर से शुरू होता है अर्थात् सूर्योदय के दौरान और किसी अन्य समय अवधि के दौरान इस राग का गायन–वादन नहीं किया जा सकता। पं० भातखंडे जी द्वारा समय सिद्धांत से संबंधित जिन मुख्य विशेषताओं का उल्लेख किया गया हैं, जो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से संधिप्रकाश रागों से संबंधित हैं, इसका संक्षिप्त में विश्लेषण कुछ इस प्रकार हैं–

रागों के समय सिद्धांत के तीन वर्गों में से प्रथम वर्ग, जिसमें कोमल रे–ध स्वरों की प्रधानता है, प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों से संबंधित हैं। लेकिन कैसे? यदि हम प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों की बात करें तो यह नियम सत्य साबित होता है। जिनमें कोमल ऋषभ तथा कोमल धैवत दोनों स्वरों का प्रयोग होता है।

रागों का समय सिद्धांत का राग–वर्गीकरण में रागों की प्रस्तुति के समय पर आधारित है। कोमल ऋषभ एवं कोमल धैवत स्वर की उपस्थिति एवं अनुपस्थिति के आधार पर कुछ प्रचलित प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता हैं–

(i) कोमल ऋषभ एवं कोमल धैवत युक्त राग, जैसे–राग भैरव, रामकली, जोगिया, ललित इत्यादि।

(ii) केवल कोमल ऋषभ युक्त राग, जैसे–राग अहीर भैरव, भटियार इत्यादि।

(iii) केवल कोमल धैवत युक्त राग, जैसे–राग नट भैरव।

उपर्युक्त वर्गीकरण में यह बात ध्यान देने योग्य है कि अधिकांश प्रचलित व प्रमुख प्रातःकालीन संधिप्रकाश राग भैरव थाट के राग हैं जिनमें अधिकतर रागों में कोमल ऋषभ एवं कोमल धैवत दोनों स्वरों का प्रयोग किया गया है।

उपर्युक्त वर्गीकरण में हमने देखा कि भैरव के अतिरिक्त राग भटियार एवं ललित भी संधिप्रकाश रागों की श्रेणी में आते हैं। राग भटियार, मारवा थाट का राग है जिसमें केवल कोमल ऋषभ का प्रयोग किया जाता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि कोमल ऋषभ स्वर, कोमल धैवत स्वर की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। अब इस तथ्य द्वारा 'रे – ध' नियम से संबंधित दो प्रश्न उठते हैं?

(1) यदि कोमल रे – ध स्वर वाले रागों को संधिप्रकाश रागों की श्रेणी में रखा गया है तो तोड़ी, आसावरी एवं भैरवी थाट के रागों को संधिप्रकाश रागों की श्रेणी में क्यों नहीं रखा गया? तोड़ी एवं भैरवी थाट के राग कोमल ऋषभ एवं कोमल धैवत स्वरों से युक्त राग हैं जबकि आसावरी थाट के रागों में इन दोनों में से केवल कोमल धैवत स्वर का प्रयोग किया गया है।

(2) जब पं० भातखंडे जी द्वारा 'रे – ध' स्वरों से युक्त रागों को संधिप्रकाश रागों की संज्ञा दी गई है तो मारवा थाट इस वर्गीकरण के अंतर्गत किस प्रकार उचित है?

उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार हैं–

(i) **कोमल ऋषभ के साथ गंधार स्वर का प्रयोग –** कोमल ऋषभ एवं गंधार स्वर युक्त राग संधिप्रकाश राग कहलाते हैं।[3] भैरव, पूर्वी एवं मारवा थाट के राग इस नियम का पालन करते हुये यह भी बतलाते हैं कि मारवा थाट के रागों में धैवत स्वर कोमल ना होने के बावजूद भी ये राग इस समूह से किस प्रकार संबंधित हैं।

इससे यह तो समझ में आता है कि तोड़ी थाट का आश्रय राग (रे, ग, मं, ध) स्वरों से युक्त, आसावरी थाट का आश्रय राग (ग, ध नि) स्वरों से युक्त तथा भैरवी थाट का आश्रय राग (रे, ग, ध, नि) स्वरों से युक्त तथा इनके जन्य राग जो कोमल ऋषभ तथा कोमल धैवत के साथ–साथ कोमल गंधार स्वर से युक्त हैं, उनको संधिप्रकाश रागों की श्रेणी में क्यों नहीं रखा गया।

(ii) आसावरी और भैरवी थाटों के रागों को संधिप्रकाश रागों की श्रेणी में ना रखने का एक अन्य कारण यह भी है कि इन रागों में कोमल गंधार एवं कोमल निषाद स्वर का प्रयोग होता है, जबकि ऐसे रागों का गायन–वादन दिन एवं रात्रि के दूसरे प्रहर में निर्धारित किया गया है। उदाहरणस्वरूप, आसावरी थाट का राग जौनपुरी एवं भैरवी थाट का राग बिलासखानी तोड़ी भी दिन के दूसरे प्रहर में गाये–बजाये जाते हैं।

(iii) प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों में शुद्ध मध्यम स्वर की प्रधानता अधिक है। जैसे राग भैरव, अहीर भैरव, नट भैरव, जोगिया इत्यादि। इसके अतिरिक्त, राग ललित एवं रामकली की बात करें तो इनमें दोनों मध्यमों का प्रयोग किया जाता है, परंतु दोनों ही रागों में शुद्ध मध्यम की प्रबलता अधिक रहती है। जबकि तोड़ी थाट के राग जैसे–मियां की तोड़ी, गुर्जरी तोड़ी, जिसमें तीव्र मध्यम की प्रधानता है, को दिन के दूसरे प्रहर के रागों की श्रेणी में रखा गया है।

प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों के अंतर्गत तोड़ी राग को ना रखने के संदर्भ में पं॰ भातखंडे जी ने इस प्रकार व्याख्या की है–

"राग तोड़ी जिसे अपने गायक आज गाते हैं, वह उत्तरांग वादी जरूर है, परंतु उसका गायन समय प्रातःकालीन नहीं है। यह राग सवेरे 8 बजे से 10 बजे तक गाया जाता है। इसमें संदेह है कि राग तोड़ी उषाकाल में गाना अपने आज के गायकों को मान्य होगा, पद्धति की दृष्टि से राग तोड़ी सऱीखा तीव्र म, नि स्वर ग्रहण करने वाले प्रकार, सुबह 10 बजे के समय में थोड़ा विसंत ही मालूम देगा, परंतु समाज में प्रचलित भावना को मान देकर चलने से अपना हित ही होगा। अब कोमल रे ग ध और तीव्र म नि स्वर लगने वाले तोड़ी का प्रश्न रहेगा, परंतु हम व्यवहार के साथ चलें वही अच्छा है।"[4]

प्रातःकालीन रागों के सन्दर्भ में एक विशेष तथ्य यह है कि इन रागों का प्रारम्भ अधिकांशतः 'सा रे ग' स्वरावली से होती है, जबकि सायंकालीन रागों में अधिकतर 'नि़ रे ग' स्वर समूह देखने को मिलता है। जैसे–

भैरव – सा रे ग म प ध नि सां।

नट भैरव – सा रे ग म प ध नि सां।

सायंकालीन संधिप्रकाश रागों के सिद्धांत

सायंकालीन संधिप्रकाश राग पूर्वी एवं मारवा थाट के रागों के अंतर्गत आते हैं। पूर्वी एवं मारवा, दोनों ही थाटों में कोमल ऋषभ का प्रयोग किया जाता है जो कि संधिप्रकाश रागों की विशेष पहचान है।

प्रातःकालीन एवं सायंकालीन संधिप्रकाश रागों में मुख्य अंतर मध्यम स्वर का है क्योंकि प्रातःकालीन रागों में शुद्ध मध्यम का प्रयोग प्रबल होता है, जबकि सायंकालीन रागों में तीव्र मध्यम का प्रयोग प्रबल रूप से किया जाता है। पूर्वी एवं मारवा दोनों ही थाटों के राग तीव्र मध्यम युक्त हैं जो कि सायंकालीन संधिप्रकाश रागों की विशेषता है। पूर्वी एवं मारवा थाटों में भी एक मतभेद धैवत स्वर का है, क्योंकि पूर्वी थाट में कोमल धैवत का प्रयोग किया जाता है जबकि मारवा थाट में शुद्ध धैवत का प्रयोग किया जाता है। सायंकालीन संधिप्रकाश के कुछ प्रचलित राग इस प्रकार है–

(i) कोमल ऋषभ एवं कोमल धैवत युक्त राग, जैसे–पूर्वी, पूरियाधनाश्री, श्री इत्यादि।

(ii) केवल कोमल ऋषभ युक्त राग, जैसे–मारवा, पूरिया एवं पूरिया कल्याण इत्यादि।

पूर्वी एवं मारवा, दोनों थाटों में कोमल ऋषभ स्वर का प्रयोग किया जाता है जबकि कोमल धैवत स्वर का प्रयोग केवल पूर्वी थाट में किया जाता हैं। इसलिये भैरव, पूर्वी तथा मारवा थाट के रागों को मिलाकर यहाँ सामान्य तौर पर यह निष्कर्ष निकलता है कि संधिप्रकाश रागों में कोमल ऋषभ स्वर की प्रधानता धैवत स्वर की तुलना में कुछ अधिक है।

एक महत्वपूर्ण बात यहाँ पर यह है कि प्रातःकालीन रागों के विपरीत सायंकालीन रागों का आरम्भ अधिकतर 'ऩि रे ग' की स्वरावली से होता है। जैसे–राग पूरियाधनाश्री, राग पूरिया।

पूरियाधनाश्री – ऩि रे ग मं प ध नि सां।

पूरिया – ऩि रे ग मं ध नि सां

इससे यह विदित होता है कि सायंकालीन रागों के आरोह में षड्ज स्वर का लंघन अल्पत्व होता है।

राग पूरिया, अगले थाट यानि कल्याण थाट के रागों की विशेषताओं को दर्शाता है। राग पूरिया में कोमल (रे) व तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है, तथा शेष स्वर शुद्ध है। जबकि राग कल्याण में शुद्ध ऋषभ के साथ पंचम का प्रयोग भी किया जाता है।

कल्याण और पूरिया की समानतायें इस प्रकार हैं–

1. दोनों में गंधार–निषाद, वादी–सम्वादी हैं।

2. दोनों में तीव्र मध्यम तथा शुद्ध धैवत का प्रयोग।

3. दोनों में समान स्वर समूह 'ग मं ध नि' का प्रयोग।

4. दोनों राग निषाद से प्रारम्भ किये जाते हैं।

5. दोनों पूर्वांग प्रधान राग हैं।

6. दोनों में षड्ज को आरोह में नियमित रूप से छोड़ दिया जाता है और इसलिये आरोह में षड्ज एक लंघन अल्पत्व स्वर है। हाँलाकि अवरोह में षड्ज का प्रयोग आलाप–तान के समापन के लिये एक सामान्य स्वर के रूप में किया जाता है।

इन रागों में ऐसी समानतायें है, जो कि एक नये राग पूरिया–कल्याण में इनका समावेश करती हैं। यह राग पूरिया के बाद तथा अगले समय अवधि में कल्याण शुरू होने से ठीक पहले संध्या में गाया जाता है। अतः यह मिश्रण अत्यंत स्वाभाविक प्रतीत होता है। मानो इसके रचनाकार का उद्देश्य, पूरिया के स्वरों में कल्याण के पंचम को समाविष्ट करना था।

उपरोक्त चर्चा से मोटे तौर पर दो निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं–

(1) शाम के संधिप्रकाश रागों में व्याकरणिक शुद्धता के लिये, पूर्वी थाट के रागों को पहले गाया जाना उपयुक्त लगता हैं। उसके बाद मारवा थाट के रागों को गाया जा सकता है। इसका कारण यह है कि पूर्वी थाट की तुलना में मारवा थाट के रागों में स्वरों का सामंजस्य कल्याण थाट रागों के स्वरों से अधिक दिखाई पड़ता है।

(2) यहाँ तक कि मारवा थाट और पूरिया के बीच भी, जिनमें समान स्वरों का प्रयोग किया जाता है, यदि अगले प्रहर के कल्याण थाट के रागों के आधार पर एक विकल्प दिया जाये तो, मारवा के बाद पूरिया रखना होगा क्योंकि मारवा की तुलना में राग पूरिया, कल्याण के अधिक निकट है। इसलिये 'पूरिया कल्याण' एक 'परमेल प्रवेशक' राग है जो राग पूरिया का अनुसरण करेगा।

संधिप्रकाश रागों में मध्यम स्वर का महत्व

हिन्दुस्तानी संगीत में मध्यम स्वर काफी चमत्कारिक माना जाता है क्योंकि यह ना केवल राग के गायन समय को निर्धारित करने में मदद करता है बल्कि राग की प्रकृति को भी बदल सकता है। इस गुण के कारण, मध्यम स्वर को 'अध्वदर्शक' स्वर की संज्ञा दी गई है।

हिन्दुस्तानी संगीत में शुद्ध मध्यम वाले राग अधिकतर दिन में तथा तीव्र मध्यम वाले राग अधिकतर रात्रि के समय गाये–बजाये जाते है। तीव्र मध्यम युक्त कुछ ही राग दिन के दौरान सुनने को

मिलते हैं।

उपरोक्त बिन्दुओं पर आपस में चर्चा करने पर मध्यम स्वर वास्तव में एक चमत्कारिक स्वर है। जिसमें राग की गतिशीलता को बदलने की क्षमता है। हिन्दुस्तानी संगीत में निम्नलिखित कारणों के लिये मध्यम एक अद्वितीय स्वर है–

- यह सप्तक के केन्द्र में स्थित है, जिसके पहले तीन स्वर हैं तथा उसके बाद तीन स्वर हैं।
- अपनी शुद्ध या आधारभूत स्थिति की तुलना में इसका विकृत या वैकल्पिक स्थान होना ही चल स्वर है। जबकि रे, ग, ध, नि स्वर कोमल कहलाते जो शुद्ध स्वरों से पहले स्थित हैं तथा शुद्ध मध्यम के बाद वाला स्वर तीव्र कहलाता है।
- मध्यम स्वर रागों में एक महत्वपूर्ण स्वर है जैसे कि वादी, संवादी या बहुत्व स्वर। अन्य शब्दों में अधिकतर रागों में यह 'न्यास का स्वर' भी है।

"रागों का गायन समय सुनिश्चित करने के लिये मध्यम स्वर को भी अत्यधिक महत्वपूर्ण माना गया है और पं॰ भातखंडे जी द्वारा इसे अध्वदर्शक स्वर की संज्ञा दी गयी है।"[5]

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर मध्यम स्वर की स्थिति को देखकर यह पता लगाया जा सकता है कि अमुक राग प्रातःकालीन राग है या सायंकालीन राग है। प्रातःकालीन संधिप्रकाश रागों का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि इस वर्ग के अधिकतर रागों में शुद्ध मध्यम की प्रधानता होती है। दूसरे, यदि किसी राग में दोनों मध्यम स्वरों का प्रयोग किया जाये, जैसे ललित, भटियार, तब भी इन रागों में शुद्ध मध्यम स्वर प्रबल रहता है।

इसके विपरीत यदि सायंकालीन रागों का विश्लेषण करें तो, इन रागों में तीव्र मध्यम की प्रधानता रहती है। उदाहरण के लिये राग श्री एवं मारवा। यदि सायंकालीन संधिप्रकाश रागों में कोई ऐसा राग लिया जाये जिसमें दोनों मध्यमों का प्रयोग हो जैसे राग पूर्वी तब भी इसमें तीव्र मध्यम का प्रयोग प्रबल रहता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संधिप्रकाश रागों में मध्यम स्वर अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिये–

सा सा, रे॒ सा, ऩि ध़॒ प़, प़, ध़॒ ऩि ध़॒ सा।

अब प्रत्येक राग के चलन के साथ जुड़े हुये व्याकरणिक संज्ञाओं को अगर हम छोड़ दे, तो उपर्युक्त स्वर समूह एक तरफ भैरव राग के हो सकते है तथा दूसरी तरफ राग पूरियाधनाश्री के भी हो सकते है। उपर्युक्त स्वरावली में राग की पहचान स्पष्ट नहीं हैं, ना ही यह स्पष्ट हो रहा हैं कि अमुक राग प्रातःकालीन है या सायंकालीन। उपर्युक्त स्वरावलियों में मध्यम के दोनों प्रकारों के प्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता हैं, जो इस प्रकार हैं–

ISSN 0975-7872

1. सा सा, रे सा, सा नि़ ध़ प़, म़ ध़ नि़ ध़ सा।

2. सा ऽ सा, रे सा, सा नि़ ध़ प़, मं़ ध़ नि़ ध़ सा।

यहाँ पहला स्वर समूह राग भैरव का है क्योंकि स्वरों में शुद्ध मध्यम का प्रयोग किया गया है। इसी स्वर समूह में जब शुद्ध मध्यम के स्थान पर तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जायेगा तो यह पूरियाधनाश्री बन जायेगा, जो कि दूसरे स्वर समूह से विदित होता हैं। इस प्रकार मध्यम स्वर के परिवर्तन से प्रातःकालीन राग, सायंकालीन राग बन सकता है।

तीव्र मध्यम में एक स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाली उपस्थिति है, जो शाम के रागों में दिखाई देती है, हाँलाकि यह किसी भी राग में ना तो वादी है और ना बहुत्व स्वर है। तब भी अनुवादी स्वर के रूप में इसकी उपस्थिति को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है, क्योंकि पूर्व–रागों में तीव्र मध्यम का प्रयोग सायंकाल संधिप्रकाश समूह से शुरू होता है और इसलिये इसकी विशिष्ट पहचान है।

इस प्रकार हम देखते हैं संधिप्रकाश रागों में मध्यम अत्यधिक महत्वपूर्ण स्वर है जो प्रातःकालीन एवं सायंकालीन रागों को एक–दूसरे से भिन्न कराता है।

संधिप्रकाश परमेल प्रवेशक राग

हिन्दुस्तानी संगीत में 'परमेल–प्रवेशक राग' नामक एक अवधारणा है। मेल, कर्नाटक संगीत में मूल पैमाने लिये हैं, जो हिन्दुस्तानी संगीत में थाट के समान हैं। 'पर' शब्द का अर्थ है–'अन्य'। परमेल–प्रवेशक राग का अर्थ उस राग से है जिसमें अन्य थाट के रागों से मिलती–जुलती विशेषताएँ पाई जायें। अर्थात् उस राग के प्रदर्शन की समय–अवधि के बाद आने वाला दूसरा मेल या थाट। परमेल प्रवेशक रागों के संबंध में पं॰ भातखंडे जी का कहना है कि–

"(अनु. 21) अगले प्रहर के रागों में जाते हुये पिछले प्रहर के अंतिम भाग में आने वाले रागों में धीरे–धीरे द्विस्वरूपी स्वर दिखाई देने लगते है। जैसे–मध्य रात्रि के कोमल ग और नि वाले राग शुरू करने से पहले खमाज थाट के अंतिम रागों में दोनों गंधार और दोनों निषाद प्रयुक्त होने वाले राग गाये जाते हैं। ऐसे मध्यवर्ती रागों को 'परमेल प्रवेशक' कहा जाता है।"[6]

उदाहरण के लिये–राग जयजयवंती, जो खमाज थाट से उत्पन्न राग है, जिसमें शुद्ध के साथ कोमल गंधार का प्रयोग भी किया जाता है। उत्तरांग के आरोह में शुद्ध निषाद के साथ–साथ अवरोह में कोमल निषाद का प्रयोग है और आरोह में एक विशेष स्वर समूह है– 'ध़नि़रे'। इसलिये यह राग रात्रि के प्रथम प्रहर के अंतिम भाग में प्रस्तुत किया जाता है। हालाँकि कोमल गंधार का इस राग में अल्प प्रयोग किया जाता है। जैसे– रे ग रे सा। यह इस राग की एक मुख्य विशेषता है। इस प्रकार, आज की बात करें तो जयजयवंती अगले थाट, यानी काफी थाट के स्वरों को दर्शाता है अर्थात् ग – नि। इसलिये राग जयजयवंती एक 'परमेल–प्रवेशक' राग है।

'क्रमिक पुस्तक मालिका' के पांचवे भाग का एक खण्ड है जिसका शीर्षक है–'संधिप्रकाश राग'। वह इसमें 'परमेल प्रवेशक संधिप्रकाश' रागों के बारे में बात करते हैं। इन रागों के बारे में उनका कहना है कि शाम के संधिप्रकाश समूह की शुरूआत से ठीक पहले वे दिन के तीसरे प्रहर में होते हैं। वह राग मुल्तानी का उदाहरण देते हुये बताते हैं कि राग मुल्तानी का आरोह–अवरोह इस प्रकार है–

आरोह	**– ऩि**	**सा**	**ग॒**	**मं**	**प**	**नि**	**सां**		
अवरोह	**– सां**	**नि**	**ध॒**	**प**	**मं**	**ग॒**	**रे॒**	**सा।**	

गंधार के अतिरिक्त अन्य सभी स्वर पूर्वी थाट के समान हैं। हालाँकि उनके अनुसार अभी भी पूर्वी थाट के रागों का आना शेष है, परंतु मुल्तानी पहले ही पूर्वी थाट की विशेषताओं को प्रदर्शित करना शुरू कर देता है।

उन्होंने 'भातखंडे संगीत शास्त्र' में भी इस अवधारणा की व्याख्या इस प्रकार की है–

"दोपहर बीतने के बाद–पीलू, बरवा, धानी, धनाश्री, भीमपलासी, पटमंजरी, प्रदीपकी, हंसकिंकणी के रागों को गाने के लिये एक या दो परमेल प्रवेशक रागों की जरूरत पड़ती है। जो संधिप्रकाश रागों की शुरूआत में सहायक होते है। ऐसी परिस्थितियों में राग मुल्तानी, इस आवश्यकता को काफी हद तक पूरा करता हैं। एक महत्वपूर्ण विशेषता जिस पर ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता है, वह है गंधार का अपवाद क्योंकि शेष स्वर पूर्वी थाट के समान हैं।"[7] इसलिये पं॰ भातखंडे जी ने 'मुल्तानी' को 'परमेल प्रवेशक राग' कहा है।

यहाँ मुल्तानी–पूर्वी के संबंध में ध्यान देने योग्य एक महत्वपूर्ण तत्व है। मुल्तानी के रूप में यह शाम के संधिप्रकाश समय की अवधि में प्रवेश करता हैं, दूसरी तरफ प्रस्तुतीकरण में पूर्वी पहला संधिप्रकाश राग है, अब यह तथ्य दो कारणों से बहुत ही विशेष है–

(1) पूर्वी में दोनों मध्यमों का प्रयोग किया जाता है, जबकि शाम को पूर्वी थाट के इस आश्रय राग के विपरीत राग पूरियाधनाश्री और राग श्री में केवल तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है। इसलिये एक तरह से पूर्वी राग शुद्ध मध्यम का प्रयोग कर पिछले वर्ग के काफी थाट के रागों के प्रभावों को प्रदर्शित कर रहा है।

(2) दोनों रागों के स्वरों की शुद्धता या विकृतता को क्षण भर के लिये अगर हम अनदेखा कर दें, तो दोनों के स्वरों का क्रम अवरोह के समान है। उदाहरण के लिये–

मुल्तानी	**– सां**	**नि**	**ध॒**	**प,**	**मं**	**ग॒,**	**मं**	**ग॒**	**–**	**–**	**–**
पूर्वी	**– सां**	**नि**	**ध॒**	**प,**	**मं**	**ग**	**म**	**ग**	**–**	**–**	**–**

यहाँ हम देख सकते हैं कि रागों के स्वरों का प्रयोग करते हुये, दोनों रागों के मध्यम और गंधार के युगल को दोहराया गया है। उपरोक्त बिन्दु साबित करते हैं कि दो क्रमिक प्रहरों के रागों की विशेषतायें एक—दूसरे को आपस में कभी—कभी अन्तरव्याप्त करती हैं, हमेशा नहीं।

यह माना जाता है कि संधिप्रकाश रागों में परमेल प्रवेशक रागों की विशेषतायें प्रदर्शित होती हैं। यहाँ दोनों प्रातः व सायंकालीन, इस तरह के रागों के बारे में बात करते हैं। प्रातःकालीन संधिप्रकाश में राग आनन्द भैरव है जो भैरव में पूर्वांग तथा बिलावल में उत्तरांग के मिश्रण से बनता है। इस प्रकार, आनंद भैरव में, भैरव तथा बिलावल दोनों अंगों का प्रयोग होता है तथा इसकी निर्धारित समय अवधि को आगे जाने के लिये कुछ स्वतंत्रता प्राप्त होती है जो रागों के बिलावल समूह से संबंधित है। आइये हम इसका विश्लेषण करें—

सभी रागों में सबसे पहला राग भैरव है, जिसे भोर के आगमन के साथ गाया जाता है। 'रे — ध' और शुद्ध 'मध्यम' की प्रबलता के साथ इसमें सुबह के संधिप्रकाश रागों की सभी मुख्य विशेषतायें हैं। भले ही सुबह के संधिप्रकाश रागों की समय अवधि 4 बजे से 7 बजे तक है, लेकिन यह सम्भव है कि उस समूह के सभी रागों को तीन घण्टे की समय अवधि में कभी भी गाया जा सकता है। यही कारण है कि व्याकरणिक दृष्टिकोण से भैरव को सुबह 4 बजे और उसके कुछ समय बाद गाया जाता है, लेकिन राग आनंद भैरव को नहीं, क्योंकि यह बिलावल की विशेषताओं को भी प्रदर्शित करता है।

आनंद भैरव का निर्दिष्ट समय उपरोक्त अवधि के अंत में आता है। हम कह सकते हैं कि प्रातः 6 बजे से 7 बजे की समय अवधि के अलावा बिलावल थाट के रागों के गायन समय में भी प्रवेश करते हैं। इस तर्क के साथ आनंद भैरव को सुबह 7 बजे के बाद कुछ समय के लिये गाया जा सकता है। यह सिद्धांत दोपहर को गाये जाने वाले मुल्तानी पर भी लागू होता है।

हिन्दुस्तानी संगीत में संधिप्रकाश रागों का महत्व

हिन्दुस्तानी संगीत में संधिप्रकाश रागों का विशेष महत्व है। क्योंकि संधिप्रकाश रागों की अपनी कुछ निजी विशेषतायें होती हैं जो इन्हें अन्य रागों से भिन्न करती है। संधिप्रकाश राग अपने अंदर अध्यात्मपूर्ण भाव लिये हुये है क्योंकि इस समय के रागों का ऐसा प्रभाव होता है, जो कि अपने अंदर आसीम गांभीर्य और शांति लिये हुये होते हैं।

भारतीय संगीत में स्वर, समय—सिद्धांत, रस, सौन्दर्य इत्यादि की दृष्टि से संधिप्रकाश रागों का महत्व अधिक है। जो इस प्रकार है—

- स्वर की दृष्टि से देखें तो संधिप्रकाश राग कोमल स्वरों से युक्त होते हैं जिनका श्रोता के हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं। दूसरा संधिप्रकाश रागों में मध्यम स्वर का भी विशेष महत्व है जो संधिप्रकाश रागों को पहचानने में भी सहायक होता है।

- समय सिद्धांत के दृष्टिकोण से एक विशेष समय गायन–वादन करने पर इन रागों का महत्व अधिक है। उदाहरण के लिये–राग भैरव एक गंभीर प्रकृति का राग है। जिसको प्रातःकाल 4 बजे से 7 बजे के अंतर्गत गाया–बजाया जाता है। शांति के इस वातावरण में भैरव स्वरों का लगाव अत्यंत आकर्षक होता है। जो श्रोताओं को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।
- सौन्दर्य की दृष्टि से, संधिप्रकाश राग अत्यंत सुंदर एवं कर्णप्रिय होते हैं। उदाहरण स्वरूप, राग भैरव प्रभातबेला का सर्वप्रसिद्ध राग है। इसका वातावरण भक्ति रस युक्त गांभीर्य से भरा हुआ है। इस राग में रे – ध (कोमल) स्वरों को आंदोलित करके लगाया जाता है जो सुनने में बहुत ही कर्णप्रिय लगते हैं। जैसे–ग म रे ऽ रे ऽ सा। कभी–कभी आरोह में पंचम को लांघकर मध्यम से धैवत पर जाते हैं, जिससे राग भैरव का सौन्दर्य पक्ष और अधिक निखर जाता हैं।
- संधिप्रकाश रागों द्वारा शांत, करूण तथा भक्तिरस की निष्पत्ति होती है। जैसे राग भैरव द्वारा करूण रस तथा भक्ति रस की निष्पत्ति होती है। रागों की विभिन्न स्वरावलियों के साथ उनकी बंदिशों के बोल भी राग की भावनायें या रस को व्यक्त करने में अत्यंत सहायक होते हैं। संधिप्रकाश रागों में ध्यान, चिंतन, एकांत, वैराग्य, अकेलापन, उदासी, निराशा, संकट इत्यादि की भावनायें व्यक्त होती हैं। उदाहरण के लिये उस्ताद राशीद खाँ द्वारा प्रस्तुत राग भैरव (द्रुतख्याल) की बंदिश–

जग करतार तू ही आनंद बंधावत दीजे।
नैया मोरी मझधार भँवर में, तुम ही करोगे बेड़ा पार।[8]

उपर्युक्त बंदिश की शब्दावली में हम देख सकते हैं कि, बंदिश के बोलों द्वारा भक्ति रस की निष्पत्ति होती है।

यहाँ एक महत्वपूर्ण बात यह है कि, कभी–कभी हम पाते हैं कि बंदिशों के बोलों से विकसित होने वाले मनोभाव, राग के भाव या रस के विपरीत होते हैं। जब भी इस प्रकार की स्थिति देखने को मिलती है तो इस स्थिति में राग का मूल रस, बंदिश के बोलों से उत्पन्न होने वाले रस या भावों पर भारी पड़ता है, जिससे सम्पूर्ण राग के रस को कोई हानि नहीं पहुँचती है। उदाहरण के लिये पं॰ अजोय चक्रवर्ती द्वारा प्रस्तुत अहीर भैरव की (द्रुत ख्याल) बंदिश–

"सांवरी सलोनी अलबेली नवेली नार...."[9]

यहाँ बंदिश के बोलों द्वारा श्रृंगार रस की निष्पत्ति होती है। लेकिन हिन्दुस्तानी संगीत में इस प्रकार की द्वंदात्मकता असामान्य नहीं है, अतः इस तथ्य को उचित ठहराया जा सकता है कि इस सिद्धांत का अनुप्रयोग केवल तभी तक प्रभावी होता है जब तक कि बंदिश विलम्बित लय में होती है। राग के आधार के रूप में बंदिश की उठान के विशिष्ट संबंध के साथ राग का रस धीरे–धीरे करूण रस से वीर रस की ओर अग्रसर होता जाता है; जहाँ सम्पूर्ण प्रदर्शन सरगम, तान, बोल बाँट के तेज़ संयोजन के साथ रचना की गति के माध्यम से सक्रिय होता है। इस तरह के एक त्वरित पुनरावृत्ति के तहत राग अहीर

भैरव के करूण रस को प्रभावी ढंग से नहीं दिखाया जा सकता क्योंकि छोटा ख्याल में बंदिश मध्य से द्रुत लय की ओर बढ़ रही है। इसलिये, उपर्युक्त इस तरह की बंदिशों से राग के सौन्दर्य–भाव के समग्र रस को हानि नहीं पहुँचती है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि हिन्दुस्तानी संगीत में संधिप्रकाश रागों का अत्यधिक महत्व है।

संधिप्रकाश रागों का महत्व केवल हिन्दुस्तानी संगीत तक ही सीमित नहीं है बल्कि फिल्मी संगीत (Bollywood Music) में भी संधिप्रकाश रागों की महत्वपूर्ण भूमिका है। हिन्दी फिल्मी संगीत में अनेकानेक धुने संधिप्रकाश रागों पर आधारित है। जिसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

(1) सन् 1952 में 'बैजू बावरा' फिल्म का गाना 'मोहे भूल गये सांवरिया' राग भैरव पर आधारित है। जिसके निर्देशक नौशाद खाँ तथा गायिका लता मंगेशकर जी हैं।

(2) सन् 1984 में 'सारांश' फिल्म का गाना 'अंधियारा गहराया सूनापन घिर आया" अहीर भैरव, बिलावल तथा पूरियाधनाश्री राग पर आधारित है। इसके निर्देशक अजीत वर्मा तथा गायक भूपिंदर सिंह हैं।

(3) सन् 1963 में फिल्म 'मेरी सूरत तेरी आँखें' का गाना, जो अद्धा तीनताल में बाधित है– 'पूछो ना कैसे मैंने रैन बिताई' राग अहीर भैरव पर आधारित है। इसके निर्देशक एस.डी. बर्मन तथा गायक मन्ना डे है।

अतः निष्कर्ष के आधार पर यह कहा जा सकता है कि संधिप्रकाश रागों का हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत एवं फिल्मी संगीत दोनों में महत्वपूर्ण स्थान है। जो श्रोताओं को विशेष रूप से अपनी ओर आकर्षित कर उन्हें असीम आनन्द की अनुभूति कराते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भातखंडे, विष्णु नारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग–5, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ. प्र.)
2. भातखंडे, विष्णु नारायण (1956), भातखंडे संगीत शास्त्र, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, भाग–3 एवं 4, प्रथम संस्करण, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ. प्र.)
3. श्रीवास्तव, हरिशचन्द्र, राग परिचय, भाग–2 एवं 3, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहबाद
4. Dey, Ananya Kumar (2008), Nyasa in Raga : The Pleasant Pause in Hindustani Music, Kanishka Publishers, Distributors, Delhi
5. Khan, Rashid, youtube recording-http://www.youtube.com watch? Y=Um/Pq WjY07A
6. Chakroborty, Ajoy, youtube recording-http://www.youtube.com watch? Y=Um/Pq WjY07A

ISSN 0975-7872

पाद टिप्पणी

1. भातखंडे, पं॰ विष्णु नारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग–5, पृ.सं.–31
2. वही
3. Dey, Ananya Kumar (2008), Nyasa in Raga : The Pleasant Pause in Hindustani Music, page no.-165
4. भातखंडे, पं॰ विष्णु नारायण, भातखंडे संगीत शास्त्र, भाग–3, पृ.सं.–5
5. भातखंडे, पं॰ विष्णु नारायण, भाखतंडे संगीत शास्त्र, भाग–4, पृ.सं.–22
6. भातखंडे, पं॰ विष्णु नारायण, क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग–5, पृ.सं.–33
7. भातखंडे, पं॰ विष्णु नारायण, भाखतंडे संगीत शास्त्र, पृ.सं.–4
8. Khan, Rashid, youtube recording-http://www.youtube.com watch? Y=UM/PgwjYo7A
9. Chakarborty, Ajoy. Youtube recording-http://www.youtube.com watch? Y=UM/PqwjYo7A